या तो सत्ता के तंत्र के साथ रहो या फिर मारे जाओगे

पुण्य प्रसून बाजपेयी

कागज का दाम बिगाड़ रहा है पुस्तकों का मजा गरीबी बढ़ा रही हैं बीमारियां एक दशक से बुना जा रहा है पश्चिमी उप्र को सांप्रदायिक बनाने का जाल

एन्कांउटर हर किसी का होगा, जो सत्ता के खिलाफ होगा! कल तक पुलिस, सत्ता विरोधियो को निशाने पर ले रही थी तो अब पुलिसवाले का ही एन्काउंटर हो गया क्योंकि वह सत्ता की धारा के विपरीत जा रहा था। बुलंदशहर की हिंसा के बाद उभरे हालात ने एक साथ कई सवालों को जन्म दे दिया है। मसलन, कानून का राज खत्म होता है तो कानून के रखवाले भी निशाने पर आ सकते हैं। सिस्टम जब सत्ता की हथेलियों पर नाचने लगता है तो फिर सिस्टम किसी के लिए नहीं होता। संवैधानिक संस्थाओ के बेअसर होने का यह कतई मतलब नहीं होगा कि संवैधानिक संस्थाओ के रखवाले बच जायेगें। और आखरी सवाल कि क्या राजनीतिक सत्ता वाकई इतनी ताकतवर हो चुकी है कि कल तक जिस पुलिस को ढाल बनाया आज उसी ढाल को निशाने पर ले रही है?

यानी लोकतंत्र को धमकाते भीडतंत्र के पीछे लोकतंत्र के नाम पर सत्ता पाने वाले ही हैं। और इन सारे सवालों के अक्स में बुलंदशहर में पुलिस इंस्पेक्टर को मारने के आरोपितों की कतार में सत्ताधारी राजनीतिक दल से जुड़ा होना भर है या सत्ता के अनुकुल विचार को अपने तरीके से प्रचारित-प्रसारित करने वाले हिन्दुवादी संगठनों की सोच है। जो बेखौफ हैं और ये मान कर सक्रिय हैं कि उनके अपराध को अपराध माना नहीं जायेगा। यानी अब वह बारीक सियासत नहीं रही जब सत्ताधारी के लिये कानून बदल जाता था। सत्ताधारियों के करीबियो के लिये कानून का काम करना ढीला पड़ जाता था। या सत्ता के तंत्र महज एक फोन पर उनके लिए खुद को लचर बना लेता था।

अब तो लकीर मोटी हो चली है। सत्ता कोई फोन नहीं करती। कानून ढीला नहीं पड़ता। कानून को बदला भी नहीं जाता। बल्कि सत्तानुकुल भीडतंत्र ही लोकतंत्र हो जाता है। सत्ता के रंग में रंगी भीड़ ही कानून मान ली जाती है। और सिस्टम के लिये सीधा संवाद सियासत खुद की हरकतों से ही बना देती है कि उसे कानून का राज को बरकरार रखने के लिए नहीं बल्कि सत्ता बरकरार रखने वालों के इशारे पर काम करना है। और ये इशारा बीजेपी के एक अदने से कार्यकत्ता का हो सकता है। संघ के संगठन विहिप या बंजरंग दल का हो सकता है। गौ रक्षकों के नाम पर दिन के उजाले में खुद को पुलिस से ताकतवर मानने वाले भीडतंत्र का हो सकता है।

जाहिर है, बुलंदशहर को लेकर पुलिस रिपोर्ट तो यही बताती है कि पुलिसकर्मी सुबोध कुमार सिंह की हत्या के पीछे अकलाख़ की हत्या की जांच को सत्तानुकुल न करने की सुबोध कुमार सिंह की हिम्मत रही। जो पुलिस यूपी में कल तक 29 एन्काउंटर कर चुकी थी और हर एन्काउंटर के बाद योगी सत्ता ने ताली पीटी जिससे एन्काउंटर करती पुलिसकर्मी को आपराधिक नैतिक बल, सत्ता से मिलता रहा। तो जब उसके सामने उसके अपने ही सहयोगी निडर पुलिसकर्मी सुबोध कुमार सिंह आ गये तो सत्ता की ताली पर तमगा बटोरती पुलिस को भी सुबोध की हत्या में कोई गलती दिखायी नहीं दी।

पुलिसकर्मियों का इंस्पेक्टर सुबोध को मरने के लिये छोड़ देना बताता है कि पुलिस को कानून के राज की रक्षा नहीं करनी है बल्कि सत्तानुकुल भीड़तंत्र को ही सहेजना है। ये कोई खास बात नहीं कि अब पुलिस की फाइल में आरोपितों की फेहरिस्त में बजरंग दल का योगेश राज हो या बीजेपी का सचिन, या फिर गौ रक्षा के नाम पर गले में भगवा लपेटे खुद को हिन्दूवादी कहने वाला राजकुमार, मुकेश, देवेन्द्र, चमन, राजकुमार, टिंकू या विनीत का नाम है, क्योंकि इन नामो को अब सत्ताधारी होने की पहचान बुलंदशहर में मिल गई है।

जिस मोटी लकीर का जिक्र शुरु में किया गया है, वह कैसे अब और मोटी की जा रही है इसे समझने के लिये तीन स्तर पर जाना होगा । पहला , पुलिस के लिये आरोपी वीआईपी अपराधी है। दूसरा वीआईपी आरोपी अपराधी की पहचान अब विहिप, बजंरग दल, गो रक्षा समिति या बीजेपी के कार्यकत्ता भर की नहीं रही, उसका कद सत्ता बनाये रखने के औजार बनने का हो गया। तीसरा, जब पुलिस के लिये सत्तानुकुल हो कर अपराध करने की छूट है तब न्यायलय के सामने भी सवाल है कि वह जाँच के सबूतों के आधार पर फैसली दे, जिस जाँच को पुलिस ही करती है। और किसा तरह इन तीन स्तरों को मजबूत किया गया उसके भी तीन उदाहरण हैं।

पहला तो सुप्रीम कोर्ट से रिटायर हुये जस्टिस जोसेफ के इस बयान से समझा जा सकता है, जब वह कहते हैं कि पूर्व चीफ जस्टिस दीपक मिश्रा के वक्त ऊपर से निर्देश दिये जा रहे थे। और रोटी पानी के लिये कैसे वह समझौता कर सकते हैं। यानी सुप्रीम कोर्ट की कार्रवाई को भी अगर जस्टिस जोसेफ के नजरिये से समझें तो सत्ता सुप्रीम कोर्ट को भी अपने खिलाफ जाने देना नहीं चाहती और दूसरा, न्याय की खरीद फरोख्त सत्ता के जरिये भी हो रही है। यानी जो बिकना चाहता है वह बिक सकता है। लेकिन इसके व्यापक दायरे को समझें तो सत्ता कोई कारपोरेट संस्था नहीं है। बल्कि सत्ता तो लोकतंत्र की पहचान है।

संविधान के हक में खडी संस्था है। लेकिन जिस अंदाज में सत्ता काम कर रही है उसमें सत्तानुकुल होना ही अगर सबसे बडा विचार है या फिर जनता द्वारा चुनी हुई सत्ता लोकतंत्र को प्रभावित करने के लिये आपराधिक कार्यो में संलिप्त हो जाये, या आपराधिक कार्यो से खुद को बरकरार रखने की दिशा में बढ़ जाये तो क्या होगा? जाहिर है इसके बाद कोई भी संवैधानिक संस्था या कानून का राज बचेगा कैसे ?

दरअसल इस पूरी प्रक्रिया में नया सवाल ये भी है कि क्या चुनाव अलोकतांत्रिक होते माहौल में एक सेफ्टी वाल्व है? और अभी तक ये माना जाता रहा कि चुनाव में सत्ता परिवर्तन कर जनता अलोकतांत्रिक होती सत्ता के खिलाफ अपना सारा गुस्सा निकाल देती है। लेकिन इस प्रक्रिया में जब पहली बार ये सवाल सामने आया है कि चुनावी लोकतंत्र की परिभाषा को ही अलोकतांत्रिक मूल्यों को परोस कर बदल दिया जाये। यानी पुलिस, कोर्ट, मीडिया, जांच एंजेसी, सभी अलोकतांत्रिक पहल को सत्ता के डर से लोकतांत्रिक बताने लगें, तो फिर चुनाव सेफ्टी वाल्व के तौर पर भी कैसे बचेगा?

क्योंकि हालात तो पहले भी बिगड़े लेकिन तब भी संवैधानिक संस्थाओं की भूमिका को जायज माना गया। लेकिन जब लोकतंत्र का हर स्तम्भ सत्ता बरकरार रखने के लिये काम करने लगेगा और देशहित या राष्ट्रभक्ति भी सत्तानुकुल होने में ही दिखायी देगी तो फिर बुलंदशहर में मारे गये पुलिसकर्मी सुबोध कुमार सिंह के हत्यारे भी हत्यारे नहीं कहलायेगें। बल्कि आने वाले वक्त में संसद में बैठे 212 दागी सांसदो और देश भर की विधानसभाओ में बैठे 1284 दागी विधायकों में से ही एक होगें। तो इंतज़ार कीजिए, आरोपियों के जनता के नुमाइन्दे होकर विशेषाधिकार पाने तक का!

हनुमान बनाम दलित की इस नई राजनीति का मक़सद क्या है?

कँवल भारती

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने हनुमान को दलित क्या कह दिया, प्याली में तूफ़ान आ गया। उनकी एक तसवीर भी मीडिया में वायरल हुई, जिसमें वे अपनी गोद में एक बंदर को बिठाए हुए फ़ाइलें देख रहे हैं। अब ब्राह्मण की परेशानी यह है कि वह दलित की पूजा नहीं कर सकता, क्योंकि उसके पुरखों ने सारे भगवान् उच्च वर्ण में बनाए हैं। फिर हनुमान दलित कैसे हो सकते हैं? एक तो करेला और वह भी नीम चढ़ा। यानी, एक तो दलित और वह भी वर्ण बाहर ङ्क अवर्ण। अब एक अवर्ण को हर मंगलवार को कैसे भोग लगाएँ? यही दुविधा तुलसीदास की भी थी। वह भी एक अवर्ण को कैसे शीश झुका सकते थे? अत:उन्होंने हनुमान को मूँज का जनेऊ पहना दिया—'काँधे मूज जनेऊ छाजे'। यानी जनेऊ पहनने से हनुमान ब्राह्मण हो गए।

हनुमान को दलित कहे जाने के विरुद्ध दो प्रतिक्रियाएँ सामने आ रही हैं। एक ब्राह्मणों की ओर से, जिनके लिए, जैसा कि स्वामी स्वरूपानंद ने कहा है, हनुमान जी को दलित कहना अपमानजनक है। यानी दलित सबसे अपमानजनक प्राणी है। अतः ब्राह्मणों की भावनाएँ यहाँ तक आहत हुईं कि उनमें से एक राजस्थान ब्राह्मण सभा ने योगी के ख़िलाफ़ क़ानूनी नोटिस ही भिजवा दिया है। कुछ ने हनुमान को ब्राह्मण साबित करने के लिए उनका 'चौबे' गोत्र भी ढूंढ लिया।

वह ब्राह्मण फिर कैसे, जो वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध दलित को पूज्य मान ले, इसलिए किसी ब्राह्मण ने यह कहकर कि हनुमान जब प्रगट हुए थे, तो उस समय जातिप्रथा ही नहीं थी, हनुमान को दलित मानने की जड़ ही ख़त्म करनी चाही। पर क्या जड़ इस तरह ख़त्म होती है? यह शतुरमुर्ग की तरह रेत में गर्दन घुसेड़ कर संकट से मुक्ति पाने का भ्रम पालना है। सवाल यह है कि जिस समय हनुमान पैदा हुए थे, उसी समय श्रीराम भी तो जन्मे थे, फिर श्रीराम की क्षत्रिय जाति कैसे आ गई? अगर उस युग में जाति-व्यवस्था नहीं थी, तो वशिष्ठ ब्राह्मण, श्रीराम क्षत्रिय और केकैयी शूद्र कैसे मान लिए गए? अगर ये वर्ण हैं, जाति नहीं, तो केवट निषाद के बारे में क्या ख्याल है? क्या वह जाति नहीं है?

हनुमान प्रभु राम का अवतार कैसे?

अभी मैंने किसी महाशय का कथन पढ़ा कि 'हनुमान प्रभु राम का रूद्र अवतार हैं, और जाति इंसान की होती है, अवतार की नहीं'। आस्था तर्क नहीं करती है, बल्कि आस्था को बचाने के लिए तर्क गढ़ने की कोशिश करती है, जो हमेशा फूहड़ होती है। इसलिए यह तर्क भी फूहड़ है। सारे शास्त्र कहते हैं कि श्रीराम विष्णु के अवतार हैं, जिन्होंने क्षत्रिय कुल में जन्म लिया था और शिव रूद्र के अवतार हैं, जो वैदिक देवता था। अगर हनुमान श्रीराम के अवतार हैं, तो यह अवतार श्रीराम की मृत्यु यानी सरयू में देह त्याग करने के बाद ही होना चाहिए। तब तो श्रीराम के जीवनकाल में उनके सेवक के रूप में हनुमान के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिन्ह लग जाएगा।

अतः कहना न होगा कि ज़मीन-आसमान की ये सारी कुलाचें अपने इस सच पर परदा डालने का उपक्रम है कि वे हनुमान के रूप में एक दलित को पूज रहे हैं। हनुमान आदिम जनजातीय समुदाय से थे। श्रीराम ने जिन लोगों की सहायता से जिन लोगों के ख़िलाफ़ युद्ध किया था, और जिन लोगों की सहायता से जिन लोगों को मारा था, वे सब लोग अनार्य थे, यानी वे आर्य, ब्राह्मण आदि नहीं थे। वे सब जनजातीय समुदायों और समाजों से थे और निस्संदेह अनार्य समुदायों में जाति-व्यवस्था नहीं थी। आज भी आदिवासी जनजातीय समुदायों में जाति व्यवस्था नहीं है। त्रेता युग की ङ्क जनजातियों की सहायता से जनजातियों का सफ़ाया कर ब्राह्मण राज कायम करने की ङ्क कहानी आदिवासी क्षेत्रों में आज भी चल रही है। आरएसएस इन क्षेत्रों में आदिवासियों को वनवासी कहकर उन्हें हनुमान से ही जोड़ने का काम कर रहा है। दूसरी प्रतिक्रिया दलितों की ओर से आई है। उनका कहना है कि अगर हनुमान दलित हैं, तो हनुमान मंदिरों पर दलितों का कब्जा होना चाहिए। आगरा और लखनऊ में कुछ दलित संगठनों ने हनुमान मंदिरों पर कब्जा करने के लिए प्रदर्शन भी किए हैं। 'हिंदुस्तान' (2 दिसम्बर) की ख़बर है कि 'लखनऊ में दलित उत्थान के बैनर तले दलित समुदाय के कुछ लोग हज़रतगंज के दक्षिणमुखी हनुमान मंदिर पर कब्जा करने पहुँच गए। उनके बैनर पर लिखा था- 'दलितों के देवता बजरंगबली का मन्दिर हमारा है।' अनुसूचित जाति-जनजाति आयोग ने भी कहा है कि 'दलित समाज में ही वानर गोत्र होता है'।

योगी क्या, कोई भी भाजपाई नेता अकारण बयान नहीं देता। सारे बयान, सारे मुद्दे और सारे नारे आरएसएस के कारखाने में तैयार होते हैं। योगी क्या, किसी भी भाजपाई नेता की मजाल नहीं है कि वह अपनी मर्जी से कोई बयान दे दे। अत: अगर योगी ने हनुमान को दलित कहा है, तो यह उनका अपना बयान नहीं है, बल्कि यह आरएसएस से आया बयान है। आरएसएस हनुमान को वन-नर बता कर ही आदिवासियों को राम से जोड़ने का काम कर रहा है। वन-नर हिन्दू वर्ण व्यवस्था के अंतर्गत नहीं आते हैं, इसलिए वे न ब्राह्मण हैं और न ठाकुर और न बनिया, वे शूद्र भी नहीं हैं, क्योंकि अवर्ण हैं। अवर्ण को आप दलित, आदिवासी, वंचित कुछ भी कहिए।

हनुमान मंदिरों पर दलितों का क़ब्ज़ा जायज़

दलितों की प्रतिक्रिया जायज़ है। अगर हनुमान दलित हैं, तो उनके मंदिरों पर भी दलितों का हक़ होना ही चाहिए। पर मुख्यमंत्री कहते हैं कि यह अराजकता है, जिसे बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। क्यों भई, यह अराजकता कैसे है? अगर यह अराजकता है तो राजनीति क्या है? योगी जी, यह अराजकता नहीं, राजनीति है। एक राजनीति आपने की कि हनुमान दलित थे। आपने सोचा कि हनुमान को दलित और आदिवासी कहने से राजस्थान के दलित और आदिवासी बीजेपी को वोट दे देंगे। पर जब हनुमान ने ही, दलित और आदिवासी होते हुए, उन्हें कुछ नहीं दिया, तो बीजेपी उन्हें क्या दे देगी? जैसे डूबते को तिनके का सहारा भी बड़ा सहारा लगता है, शायद उसी तरह योगीजी को लगा होगा कि अब गाय, गंगा और राम का मुद्दा तो सहारा बन नहीं रहा है, तो हो सकता है कि डूबती बीजेपी को दलित हनुमान ही बचा लें। इसलिए उन्होंने दलित हनुमान का राजनीतिक चारा दलितों के आगे फेंक दिया।

अब सवाल यह है कि हनुमान का यह नया मुद्दा क्यों पैदा किया गया? आरएसएस और बीजेपी की राजनीतिक फ़िज़ा में गाय, गंगा और श्रीराम मन्दिर का मुद्दा रहा है। उसके साधु-संत भी इसकी के लिए धर्म-समागम करते फिर रहे हैं। यह अलग बात है कि इस बार जनता उनमें शामिल नहीं हो रही है। फिर हनुमान कहाँ से आ गए? न तो कहीं कोई मुगलकालीन ढांचा गिरा कर हनुमान का विवादित मन्दिर बन रहा है, और न कोई हनुमान बनाम मुसलमान का कोई मसला चर्चा में है। फिर हनुमान बनाम दलित की इस नई राजनीति का मक़सद क्या है?

योगी क्या, कोई भी भाजपाई नेता अकारण बयान नहीं देता। सारे बयान, सारे मुद्दे और सारे नारे आरएसएस के कारखाने में तैयार होते हैं। योगी क्या, किसी भी भाजपाई नेता की मजाल नहीं है कि वह अपनी मर्जी से कोई बयान दे दे। अत: अगर योगी ने हनुमान को दलित कहा है, तो यह उनका अपना बयान नहीं है, बल्कि यह आरएसएस से आया बयान है। आरएसएस हनुमान को वन-नर बता कर ही आदिवासियों को राम से जोड़ने का काम कर रहा है। वन-नर हिन्दू वर्ण व्यवस्था के अंतर्गत नहीं आते हैं, इसलिए वे न ब्राह्मण हैं और न ठाकुर और न बनिया, वे शूद्र भी नहीं हैं, क्योंकि अवर्ण हैं। अवर्ण को आप दलित, आदिवासी, वंचित कुछ भी कहिए।

हनुमान की दलित पहचान योगी का विचार नहीं है, बल्कि यह आरएसएस का काफ़ी पुराना विचार है, जिसे उसने योगी के माध्यम से आदिवासी इलाक़ों से निकाल कर व्यापक स्तर पर दलित वर्गों से जोड़ने की राजनीति की है। किन्तु, यह दाँव आदिवासियों में तो चल सकता है, उसके बाहर यह आरएसएस और बीजेपी के लिए उलटा पड़ जाएगा। इसका कारण है एक तबक़े में दलितों के प्रति नफ़रत।